# भगवान ऋषभदेव का धर्मोपदेश : एक अध्ययन

*(आचार्य रविषेण कृत पद्मपुराण के चतुर्थ पर्व के आलोक में)*

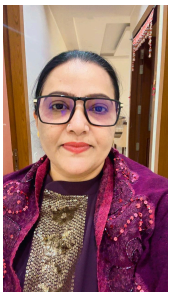

किरण यादव

**सारांश (Abstract)**

आचार्य रविषेण द्वारा रचित *पद्मपुराण* जैन पुराण परंपरा का एक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है, जिसमें प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव के जीवन, तप, केवलज्ञान तथा धर्मोपदेश का विस्तृत एवं प्रभावशाली वर्णन प्राप्त होता है। प्रस्तुत लेख में *पद्मपुराण* के चतुर्थ पर्व के आलोक में भगवान ऋषभदेव द्वारा प्रतिपादित धर्मोपदेश का दार्शनिक एवं नैतिक विश्लेषण किया गया है। समवसरण की दिव्य सभा में प्रतिपादित धर्म का स्वरूप, उद्देश्य तथा गृहस्थ और मुनि, दोनों के लिए निर्दिष्ट आचार-विधान को स्पष्ट किया गया है। अहिंसा, रत्नत्रय, व्रत-व्यवस्था एवं समता-भाव जैसे मूल सिद्धांतों के माध्यम से यह धर्मोपदेश न केवल मोक्षमार्ग का दिग्दर्शन कराता है, बल्कि लौकिक एवं पारलौकिक कल्याण का भी आधार प्रस्तुत करता है। लेख का मुख्य उद्देश्य भगवान ऋषभदेव के धर्मोपदेश की दार्शनिक गहराई को रेखांकित करते हुए उसकी समकालीन प्रासंगिकता को स्थापित करना है, जिससे यह स्पष्ट हो सके कि जैन धर्म का यह उपदेश आज के युग में भी मानव जीवन को नैतिक, संतुलित एवं उद्देश्यपूर्ण बनाने की प्रेरणा देता है।

**प्रमुख शब्द (Keywords)**

आचार्य रविषेण, पद्मपुराण, चतुर्थ पर्व, भगवान ऋषभदेव, धर्मोपदेश, समवसरण, अहिंसा, रत्नत्रय, जैन दर्शन

## 1. भूमिका (Introduction)

जैन परंपरा में पुराण साहित्य तीर्थंकरों के आदर्श जीवन, तप, ज्ञान और करुणा को लोककल्याण की दृष्टि से प्रस्तुत करता है। आचार्य रविषेण द्वारा रचित *पद्मपुराण* इसी

परंपरा की एक महत्वपूर्ण कड़ी है। इसमें जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव के जीवन-चरित्र तथा उनके द्वारा प्रतिपादित धर्म का अत्यंत प्रभावशाली चित्रण मिलता है। चतुर्थ पर्व में भगवान ऋषभदेव के दीर्घ तप के पश्चात केवलज्ञान की प्राप्ति, समवसरण की रचना और वहाँ दिया गया धर्मोपदेश वर्णित है। समवसरण में देव, मनुष्य, मुनि और श्रावक सभी समान भाव से उपस्थित होते हैं, जो जैन धर्म के समता सिद्धांत का सजीव उदाहरण है। इस सभा में भगवान ऋषभदेव धर्म को परम शरण बताते हुए यह स्पष्ट करते हैं कि समस्त प्राणी सुख की कामना से ही कर्म करते हैं और वह सुख केवल धर्म के माध्यम से ही संभव है। यह धर्मोपदेश केवल सैद्धांतिक न होकर पूर्णतः व्यावहारिक है। गृहस्थों के लिए अणुव्रत, गुणव्रत और शिक्षाव्रत तथा मुनियों के लिए महाव्रत, समितियाँ और गुप्तियाँ, इन सभी का सुव्यवस्थित विधान यह दर्शाता है कि जैन धर्म समाज के प्रत्येक वर्ग के लिए एक नैतिक, संतुलित और उद्देश्यपूर्ण जीवन-पथ प्रदान करता है। प्रस्तुत अध्ययन मुख्यतः वर्णनात्मक-विश्लेषणात्मक पद्धति पर आधारित है, जिसमें प्राथमिक ग्रंथ *पद्मपुराण* को आधार बनाकर दार्शनिक निष्कर्ष प्रस्तुत किए गए हैं।

## 2. भगवान ऋषभदेव का धर्मोपदेश

सुवर्ण के समान प्रभा के धारक, ध्यानी भगवान ऋषभदेव जगत के कल्याण के निमित्त दान-धर्म की प्रवृत्ति के लिए उद्यत हुए। धीर वीर भगवान ने छह माह के बाद प्रतिमा योग समाप्त कर पृथ्वी तल पर भ्रमण करना प्रारंभ किया। भगवान समस्त दोषों से रहित थे और मौन धारण कर ही विहार करते थे | उनका शरीर अत्यंत ऊँचा तथा जो अपने शरीर की प्रभा से आस पास के भूमंडल को आलोकित कर रहे थे ऐसे भ्रमण करने वाले भगवान

के दर्शन कर प्रजा यह समझती थी मानो दूसरा सूर्य ही भ्रमण कर रहा है | वे जिनराज पृथ्वी तल पर जहाँ जहाँ चरण रखते थे वहाँ ऐसा जान पड़ता था मानो कमल खिल उठे हों|[1] समवसरण में सिंहासन पर विराजमान भगवान की दिव्य शोभा का वर्णन केवलज्ञानी ही कर सकते हैं, हमारे जैसे तुच्छ पुरुष उस शोभा का वर्णन कैसे कर सकते हैं।[2] तदनंतर अवधि ज्ञान के द्वारा भगवान को केवल ज्ञान उत्पन्न होने का समाचार जानकर सब इन्द्र अपने अपने परिवारों के साथ वन्दना करने के लिए शीघ्र ही वहाँ आए | सर्वप्रथम वृषभसेन नामक मुनिराज इनके प्रसिद्ध गणधर थे। उसके बाद महावैराग्य को धारण करने वाले अन्य-अन्य मुनिराज भी गणधर होते रहे थे।[3]

### 3. धर्म का महत्व

समवसरण में मुनि, श्रावक और देव अपने-अपने स्थानों पर बैठे। गणधर के निवेदन करने पर[4] भगवान अपने शब्दों से देव-दुन्दुभियों के शब्दों को तिरोहित करते हुए तत्त्वार्थ को सूचित करने वाली निम्नलिखित वाणी कहने लगे।३४॥ भगवान ने कहा - " *त्रिलोक में हित चाहने वालों के लिए धर्म परम शरण है और उसी से उत्कृष्ट सुख प्राप्त होता है।*[5] *प्राणियों की समस्त चेष्टाएँ सुख के लिए हैं और सुख धर्म के निमित्त से होता है, ऐसा जानकर हे भव्य जन ! तुम सब धर्म का संग्रह करो॥३६॥ बिना मेधों के वृष्टि कैसे हो सकती है और बिना बीज के अनाज कैसे उत्पन्न हो सकता है। इसी तरह बिना धर्म के जीवों को सुख कैसे उत्पन्न हो सकता है।*[6] *जिस प्रकार पंगु मनुष्य चलने की इच्छा करे, गूंगा बोलने की*

---

[1] श्लोक 1–4
[2] श्लोक 30
[3] श्लोक 31–32
[4] श्लोक 33
[5] श्लोक 35
[6] श्लोक 37

*इच्छा करे और अंधा मनुष्य देखने की इच्छा करे, उसी प्रकार धर्म के बिना सुख प्राप्त करना है॥३८॥ जिस प्रकार इस संसार में परमाणु से छोटी कोई चीज नहीं है और आकाश से बड़ी कोई वस्तु नहीं है उसी प्रकार प्राणियों का धर्म से बड़ा कोई मित्र नहीं है| जब धर्म से ही मनुष्य संबंधी भोग, स्वर्ग और मुक्त जीवों को सुख प्राप्त हो जाता है तब दूसरा कार्य करने से क्या लाभ है।"*

**4. गृहस्थ और मुनि धर्म**

भगवान ने **अहिंसा** को निर्मल धर्म बताते हुए कहा कि जो विद्वान अहिंसा का पालन करते हैं, उनका ऊर्ध्वगमन होता है, जबकि अन्य जीव तिर्यग्लोक या अधोलोक में जन्म लेते हैं।[7] जो सम्यक दर्शन से संपन्न हैं तथा जिन्होंने जिनशासन का अच्छी तरह अभ्यास किया है वे स्वर्ग जाते हैं और वहाँ से च्युत होने पर रत्नत्रय को पाकर उत्कृष्ट मोक्ष को प्राप्त करते हैं॥४४॥ धर्म दो प्रकार का है - **(1) गृहस्थ धर्म** और **(2) मुनि धर्म**। इन दो के सिवाय और जो तीसरे प्रकार का धर्म मानते हैं, वे मोह रूपी अग्नि से जले हुए हैं॥४५॥

- गृहस्थ धर्म: पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, चार शिक्षाव्रत।[8]
- मुनि धर्म: पाँच महाव्रत, पाँच समितियाँ, तीन गुप्तियाँ।[9]

जो गृहस्थ अंत समय में समस्त आरंभ का त्याग कर समता भाव से मरण करते हैं वे उत्तम गति को प्राप्त होते हैं।[10] मुनि धर्म से युक्त व्यक्ति शुभ ध्यान में तत्पर रहते हैं, वे इस दुर्गंधीपूर्ण वीभत्स शरीर को छोड़कर स्वर्ग अथवा मोक्ष को प्राप्त होते हैं।[11] जो मनुष्य उत्कृष्ट ब्रह्मचारी दिगंबर मुनियों की भाव पूर्व स्तुति करते हैं वे भी धर्म को प्राप्त हो सकते

[7] श्लोक 39–41
[8] श्लोक 46
[9] श्लोक 48
[10] श्लोक 47
[11] श्लोक 46

हैं॥४०॥ वे उस धर्म के प्रभाव से कुगतियों में नहीं जाते किंतु उस रत्नत्रयरूपी धर्म को प्राप्त कर लेते हैं। जिसके प्रभाव से पापबंधन से मुक्त हो जाते हैं॥५१॥

भगवान के उपदेश से देव, मनुष्य और अन्य प्राणी परम हर्षित हुए, अनेक लोगों ने **सम्यक दर्शन और सम्यक ज्ञान** को अंगीकार किया। कितने ही लोगों ने गृहस्थ धर्म को अंगीकार किया और अपनी शक्ति का अनुसरण करने वाले कितने ही लोगों ने मुनिव्रत को स्वीकार किया। तदनंतर जाने के लिए उद्यत हुए सुर और असुरों ने जिनेन्द्र देव को नमस्कार किया, उनकी स्तुति की और फिर धर्म से विभूषित होकर सब लोग अपने-अपने स्थानों पर चले गए।[12] भगवान का गमन इच्छा वश नहीं होता था फिर भी वे जिस-जिस देश में पहुँचते थे वहाँ सौ योजन तक का क्षेत्र स्वर्ग के समान हो जाता था॥५५॥

## 5. निष्कर्ष (Conclusion)

पद्मपुराण में ऋषभदेव का धर्मोपदेश जैन धर्म की नैतिक और आध्यात्मिक साधना दर्शाता है।

- **अहिंसा** धर्म का मूल आधार है।
- **रत्नत्रय** का पालन मोक्ष का मार्ग है।
- गृहस्थ और मुनि के लिए पृथक आचार-विधान हैं।
- समता-भाव से जिया गया जीवन और स्वीकार की गई मृत्यु, दोनों जीव को उत्तम गति की ओर ले जाते हैं।
- जिनेन्द्र भगवान ने अनेक देशों में भ्रमण करते हुए शरणागत भव्य जीवों को रत्नत्रय का दान देकर संसार-सागर से पार किया। [13]

इस प्रकार, भगवान ऋषभदेव का यह धर्मोपदेश समकालीन युग में भी मानव जीवन को संतुलित, शांत एवं उद्देश्यपूर्ण बनाने की गहन प्रेरणा प्रदान करता है।

---

[12] श्लोक 52–54

[13] V. 56